क्या विकास में विलंबित अभिसृति एक बाधा बन जाती है? क्या भारत इससे बच पाएगा?

05

अध्याय

प्रियवर, यहां तो हमें अपने मुकाम पर ही बने रहने के लिए उतना तेज चलना होगा जितना हम चल सकते हैं। और यदि तुम्हें इससे भी आगे कहीं जाना हो तो तुम्हें उससे दोगुनी रफ्तार से चलना होगा।

-लुईस कैरल एलिस इन वंडरलैंड

वर्तमान में विकासशील देशों के संबंध में सबसे पहली बात यह है कि ये देश एक अभूतपूर्व समृद्धि के दौर से गुजर रहे हैं। यह बात भारत के संबंध में भी सत्य है जो विश्व की सर्वाधिक तेजी से परिवर्तनशील अर्थव्यवस्था वाला देश है। ''आर्थिक विकास की दौड़ में शामिल होना'' इस समृद्धि को समुपस्थित करने में एक प्रमुख प्रेरक है जिसमें निर्धन देशों ने संपन्न देशों की तुलना में अधिक तेजी से प्रगति की है तथा जीवन-स्तरों में व्याप्त अंतराल को कम किया है। विकास की दौड़ में निरंतर शामिल होते रहने की प्रक्रिया गत 20-30 वर्षों के दौरान विस्तृत और त्वरित हुई है। तथापि, 'मध्यम आय पाश' की बाधाओं का भय काफी अधिक बताया जा रहा है, इसे देखते हुए क्या भारत जैसे निम्न मध्यम आय वर्ग वाले देशों में यह प्रक्रिया मंद हो सकती है? वैश्विक वित्तीय संकट के दौर के बाद चार संभावित प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण आर्थिक विकास की दौड़ में देरी से शामिल होने से विकास की गति बाधित होने की आशंका उत्पन्न हुई है जो इस दौर में शुरू में ही शामिल हो जाने वाले जापान तथा कोरिया जैसे देशों के संदर्भ में नहीं दिखी थीं। इन प्रतिकूल परिस्थितियों में शामिल हैं: वैश्वीकरण के विरुद्ध प्रतिक्रिया जिसके कारण निर्यात अवसरों में कमी आती है: निम्न उत्पादकता से उच्च उत्पादकता क्षेत्रों में संसाधनों को अंतरित करने में कठिनाइयां (संरचनात्मक परिवर्तन), प्रौद्योगि. की गहन कार्यस्थलों की मांग के अनुरूप मानव पूंजी को उन्नत करने की चुनौती तथा कृषि क्षेत्र पर जलवायु परिवर्तन से प्रेरित दबावों का सामना करना। भारत ने अभी तक इन प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करते हुए अपनी यात्रा जारी रखी है किंतु उस दिशा में निरंतर प्रगति के लिए इन चुनौतियों का निर्णायक समाधान किया जाना आवश्यक होगा।

परिचय

5.1 विश्व में व्याप्त संपूर्ण नैराश्य भाव के बावजूद मानवता के लिए तथा विशेषकर गरीब देशों में रहनेवाले लोगों के लिए यह दौर सर्वाधिक उपयुक्त आर्थिक प्रगति का दौर है। वर्तमान में विश्वभर में व्याप्त ''बुराइयां'': युद्ध, हिंसा, अभाव तथा निर्धनता अभूतपूर्व निम्न स्तर पर हैं (पिंकर एंड गोलस्टीन 2016) (गेट्स एंड गेट्स, 2014) । इस समय विश्व स्तर पर व्याप्त अच्छाइयां-जीवन स्तर, आवश्यक सेवाओं तक पहुँच, तथा अधिक व्यापक रूप में भौतिक सुविधाओं तक पहुंच की स्थिति में अभूतपूर्व सुधार हुआ है जिससे ये इतने ऊँचे स्तर पर पहुँच गए हैं जो मानव जाति के इतिहास में पहले कभी नहीं हुआ। यह स्थिति विशेष रूप से भारत के संबंध में सत्य है जहां वर्ष 1980 के बाद सर्वाधिक उल्लेखनीय प्रगति देखी गई है।

5.2 आर्थिक विकास की दौड़ में शामिल होना आर्थिक अभिसृति, जो निर्धन देशों द्वारा संपन्न देशों के समकक्ष आने तथा जीवन स्तर में व्याप्त अंतराल को कम करने की एक प्रक्रिया है, ऐसी कुछ घटनाक्रमों के घटित होने का प्रमुख प्रेरक तत्व है। 1980 के दशक के मध्य से निर्धन वर्ग के

देशों के संपन्न वर्ग के देशों के समकक्ष आने (अभिसरण) की प्रक्रिया में तेजी आई है तथा ऐसे निर्धन देशों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है जिनमें अर्थव्यवस्था की विकास दर उन्नत अर्थव्यवस्था वाले देशों की विकास दर की तुलना में अधिक तेज हुई है। इसके अतिरिक्त निर्धन देशों की अभिसरण की दर में भी तेजी आई है। दूसरे शब्दों में ''ये देश आर्थिक विकास की दौड़ में बहुत तेजी से आगे बढ़े हैं'' (सुब्रहमण्यन, 2011)।

5.3 इसके साक्ष्य के रूप में हम ऐसे अनेक देशों की तुलना कर सकते हैं जिनमें 1960-1980 तथा 1980-2017 के दौरान संयुक्त राज्य अमरीका (अपेक्षाकृत अधिक विकासशील देशों का एक प्रतिनिधि देश) की तुलना में अधिक तेजी से संवृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त, हम यह तुलना भी कर सकते हैं कि इन अभिसृति कर रहे देशों में इन अवधियों के दौरान कितनी तेजी से संवृद्धि हुई है।

सारणी 1: उग्र अभिसृति: संयुक्त राज्य अमरीका के समकक्ष आना

अवधि	1960 से 1980 की अवधि	1980 से 2017 की अवधि
विस्तार: संयुक्त राज्य अमरीका की तुलना में अधिक तेजी से विकसित	43.7%	68.6%
होने वाले देशों का % दौड़ में तीव्रता: संयुक्त राज्य अमरीका की तुलना में औसत अतिरिक्त संवृद्धि दर	1.4%	1.7%
प्रतिदर्शा में शामिल देश	112	153

स्रोत: मेडिसन प्रोजेक्ट: आईएमएफ वर्ल्ड इकनॉमिक आउटलुक।

टिप्पणी: इस प्रतिदर्श में तेल निर्यातक तथा छोटे देश (जिनकी आबादी 2010 में 1 मिलियन से कम थी) शामिल नहीं हैं।

5.4 स्वयं भारत का विकास क्रम उन्नयन अनुकरणीय है। वर्ष 1960 में भारत एक निम्न आय समूह में शामिल देश था, जिसकी प्रति व्यक्ति आय (2011 की क्रय शाक्ति समानता के संदर्भ में) 1,033 डालर थी। यह उस समय अमरीका की प्रति व्यक्ति आय के लगभग 6 प्रतिशत के बराबर थी। फिर भी, वर्ष 2008 में भारत को निम्न मध्य आय समूह के देशों की स्थिति प्राप्त हो गई तथा भारत में वर्तमान प्रति व्यक्ति आय 6538 डॉलर है जो यू.एस. का 12 प्रतिशत है। यदि भारत में प्रति व्यक्ति आय 6.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर पर बढ़ती है, तो भारत 2020 के दशक के मध्य में उच्च-मध्यम आय वाले देश का दर्जा हासिल कर लेगा।

5.5 किंतु हाल ही में इस अभिसरण की प्रक्रिया के संबंध में संदेह व्यक्त किए गए हैं जो ''मध्यम आय पाश'' की अवधारणा पर आधारित हैं। इस संबंध में दी गई परिभाषाएं ही अवरोधक या ऐसी स्थिति को अभिव्यक्त कर सकती हैं। अत: उनके संबंध में सावधान रहना महत्वपूर्ण है। निम्न आय वर्षों तक एक वास्तविक अवरोधक रही है। यह स्थिति एक लंबे समय तक बनी रही तथा अनेक निर्धन देश विकसित देशों के समकक्ष बिल्कुल भी नहीं आ पाए। वे वास्तव में अपेक्षाकृत धनी देशों की तुलना में अधिक मंद गति से संवृद्धि कर रहे थे जिसे प्रिचेट (1997) ने ''वृहत विचलन'' कहा है।

5.6 इसी प्रकार यदि सीधे-सीधे कहा जाए तो मध्यम आय समूह के देशों के सम्मुख अवरोधक से यह आभास होना चाहिए कि इस समूह के देशों की आय के स्तर को देखते हुए उनके जिस गति से विकसित होने की आशा की जा सकती है, वे उसकी तुलना में मंद गति से (अर्थात संपन्न देशों की तुलना में मंद गति से) विकसित होंगे, इससे मध्यम आय समूह से उच्च आय समूह के देशों में उनके प्रवेश की गति बाधित होगी।

5.7 इस बाधा/रुकावट के दो कारण हो सकते हैं जो एक प्रकार से चिमटी के रूप में काम करते हैं। एक ओर जबकि इन देशों को मध्यम आय की स्थिति प्राप्त होने पर निर्धन तथा कम लागत का व्यय करने वाले प्रतिस्पर्धी देश विनिर्माण तथा गतिशील सेक्टरों से उन्हें बाहर कर देंगे तो दूसरी ओर, उनमें संस्थागत, मानव तथा प्रौद्योगिकीय पूंजी की कमी होगी जिससे वे उच्च मूल्य वधि ंत श्रृंखला में शीर्षस्थ स्थिति को प्राप्त करने से वंचित भी रह जाएंगे। इस प्रकार नीचे से धक्का दिए जाने किंतु ऊपर नहीं पहुँच पाने के कारण वे स्वयं को मध्यम आय समूह के देशों में बनाए रखने के लिए बाध्य होंगे।

5.8 जैसाकि स्पष्ट है, न तो कोई मध्यम आय पाश था और न ही ऐसी कोई बाधा उत्पन्न हुई। एक समूह के रूप में मध्य आय वाले देश अभिसृति के मानक की तुलना में अधिक तेजी से या उसके अनुरूप संवृद्धि करते रहे हैं

चित्र 1: तीनों समय अवधियों की तुलना में प्रति व्यक्ति जीडीपी में अभिसृति: अभिसृति जारी है किंतु संवृद्धि की दर घट रही है

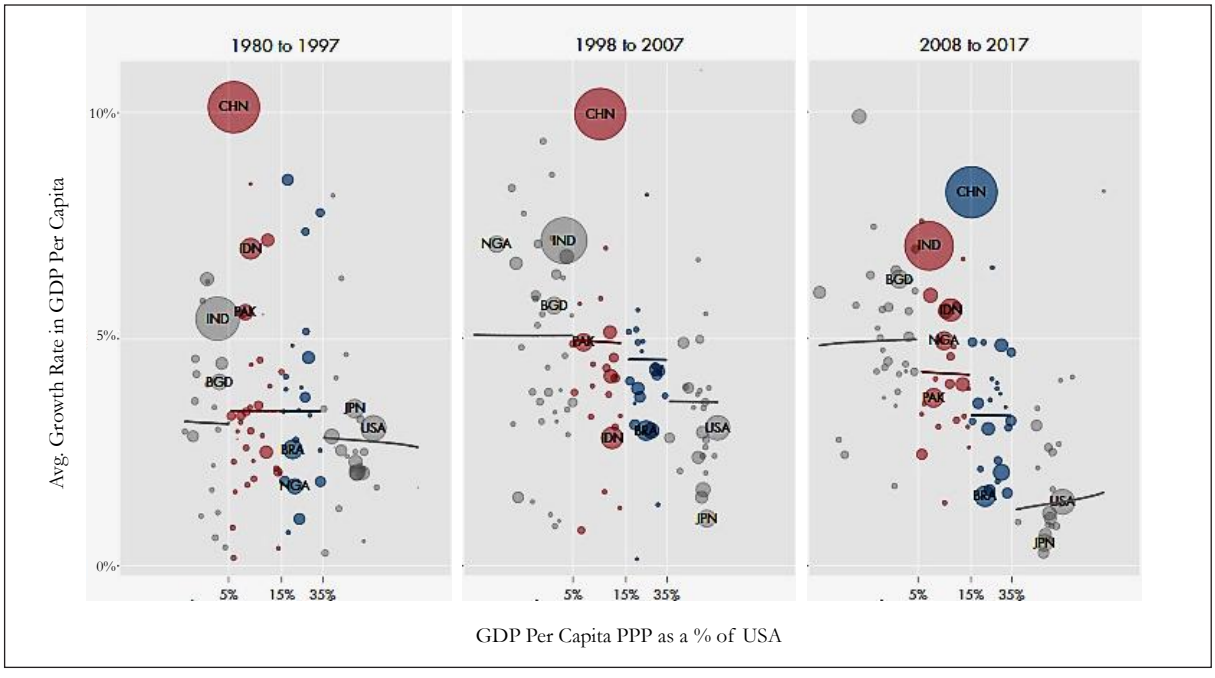

स्रोत:

टिप्पणी: रेखाएं स्थानीय बहुपदीय प्रतीपगमन (अर्थात देष्ठों के समूह के बीच औसत संबंध) दर्शाती हैं। बुलबुले आरंभिक आबादी के समानुपाती हैं, किंतु मंदी तथा औसत से संबंधित आंकड़े भारित नहीं हैं।

(ऐय्यर, दुवाल, पुय, वू, तथा झांग 2013; प्रिचेट एंड समर्स, 2014; रॉय, केस्लर एंड सुब्रमण्यन, 2016)। वास्तव में उनमें से कुछ, उदाहरण के लिए कोरिया, पुर्तगाल, पोलैंड तथा लारटविया उच्च आय स्तर के देशों में शामिल भी हो गए हैं। वास्तव में, अभिसृति प्रक्रिया पिछले दशक में भी सशक्त बनी रही है।

5.9 हम इसे चित्र 1 में देख सकते हैं। हम 1980 से 2017 तक के वर्षों को तीन अवधियों में बांटते हैं:

- 11980 से 1997, अपसृति की स्थिति जिसमें निम्न आय वर्ग के देष्ठा और अधिक पिछड़ गए;
- 1998 से 2007 की अवधि पूर्व एशियाई वित्तीय संकट से गुजरता हुआ वैश्विक वित्तीय संकट के आने तक का समय अभिसृति का आरंभिक दौर था; और
- 2008 से 2017 की अवधि ''जो विलंबित अभिसृति'' की नवीनतम अवधि है।

5.10 प्रत्येक अवधि में निम्न, निम्न मध्यम, उच्च मध्यम; तथा उच्च आय समूह के देशों की संवृद्धि दरों की तुलना की गई है। संपन्न तथा तुलनात्मक रूप से अधिक विकसित देशों से अभिसृति पर केन्द्रित रहते हुए हम इन आय समूहों को प्रत्येक अवधि के आरंभ में उनकी सापेक्षिक स्थिति के संदर्भ में परिभाषित करते हैं। निम्न आय समूह के देश वे देश हैं जिनकी प्रति व्यक्ति वास्तविक जीडीपी क्रय शक्ति समानता के संदर्भ में अमेरिका में प्रति व्यक्ति आय की तुलना में 5 प्रतिशत से कम हो; निम्न मध्यम आय समूह के देश वे देश हैं जिनकी प्रति व्यक्ति आय अमेरिका की तुलना में 5-15 प्रतिशत हो; तथा उच्च मध्यम आय समूह के देश वे देश हैं जिनकी प्रति व्यक्ति आय अमेरिका की तुलना में 15-35 प्रतिशत हो। उच्च आय समूह वाले देश वे हैं जिनकी प्रति व्यक्ति आय उस स्तर से ऊपर या अमेरिका के आय स्तर से भी ऊपर भी हो।[1]

5.11 इन चित्र खंडों में रेखाएं चार आय समूह के देशों

[1] ये स्तर जिनकी परिभाषा सपेक्षिक संदर्भ में दी गई है, विश्व बैंक द्वारा 1987 में बाजार विनिमय दरों पर सकल राष्ट्रीय आय (जीएनआई) का प्रयोग करके देशों के समूह को परिभाषित करने के लिए प्रयुक्त स्तरों के अनुरूप ही है।

[2] 1997-2007 के दशक के लिए तथा उसके पश्चात् 2007-2016 के दशक के लिए सम्मिलन से एक ऐसा गुणांक प्राप्त होता है जो पहली अवधि के लिए महत्वहीन था (143 देशों का प्रतिदर्श) तथा दूसरे प्रतिदर्श (148 देशों का प्रतिदर्श) के लिए महत्वपूर्ण किन्तु नकारात्मक था।

में से प्रत्येक के लिए इस अवधि के दौरान औसत संवृद्धि दर को सूचित करती हैं। पहली अच्छी बात यह है कि 1997 के बाद की दो अवधियों (मध्य तथा दाहिनी ओर के खंड) में औसत निर्धन, निम्न मध्यम आय तथा उच्च मध्यम आय समूह के देश सभी अपने उच्च आय वाले समकक्ष देशों की तुलना अधिक तेजी से विकसित हुए। सही संदर्भ में, किसी भी अवधि में मध्यम आय संबंधी कोई भी बाधा मौजूद नहीं थी।

5.12 इसके अतिरिक्त, 1997 के बाद से इस स्थिति में सामान्यत: अधोमुखी गिरावट आई है तथा अभिसृति की प्रक्रिया वास्तव में 2008 के बाद तेज हुई है। अपेक्षाकृत निर्धन देश निम्न मध्यम आय वाले देशों की तुलना में अधिक तेजी से संवृद्धि कर रहे हैं जो स्वयं उच्च मध्यम आय समूह वाले देशों की तुलना में अधिक तेजी से संवृद्धि कर रहे हैं तथा ये देश सर्वाधिक संपन्न देशों की तुलना में अधिक तेजी से प्रगति कर रहे हैं।

5.13 विकासशील देश विकास की दौड़ में सतत् आगे बढ़ रहे हैं और यह गति इतनी तीव्र है कि हम इसे ''अत्यधिक उग्र दौड़'' कह सकते हैं।

किंतु .....

5.14 इस अध्याय की मुख्य बात, भारत जैसे निम्न मध्यम आय समूह के देशों की अभिसृति से संबंधित है। ये वे देश हैं जो बदलाव के दौर में हैं तथा मध्यम आय समूह के देशों में शामिल होने का प्रयास कर रहे हैं। हमारा 'विलंब से इस दौड़ में शामिल होने' का आशय ऐसे देशों से है जो वैश्विक वित्तीय संकट की घटना के बाद इस दौड़ में शामिल होने के प्रयास करने लगे हैं।

5.15 इसलिए, क्या वैश्विक रूझान ऐसे देशों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं (जैसेकि भारत) जिन्होंने इस प्रक्रिया (अभिसरण क्लब) में बाद में प्रवेश किया है? दूसरे शब्दों में, क्या आर्थिक विकास की इस प्रक्रिया में ''लंबित अभिसरण'' से विकास में बाधा उत्पन्न हो सकती है?

5.16 इसका प्रथम दृष्ट्या साक्ष्य वैश्विक वित्तीय संकट (जीएफसी) के पहले और बाद की अवधियों में अभिसरण प्रक्रिया की तुलना करने पर प्राप्त होता है। जीएफसी एक ऐतिहासिक घटना थी जिसके परिणामस्वरूप विश्वभर में आर्थिक संवृद्धि की दरों में तीव्र गिरावट आई थी। उदाहरण के लिए, जीएफसी के पहले की दस-वर्षीय अवधि के दौरान दर्ज 4.3 प्रतिशत की वैश्विक संवृद्धि जीएफसी के पश्चात के दशक में घटकर 2.9 प्रतिशत रह गई थी। आय की दृष्टि से देशों के चार प्रमुख समूहों के यही आंकड़े इस प्रकार थे: उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की संवृद्धि-दर 3.6 प्रतिशत से घटकर 1.4 प्रतिशत, उच्च-मध्यम आय वाले देशों की वृद्धि-दर 4.5 प्रतिशत से घटकर 3.3 प्रतिशत, निम्न-मध्यम आय वाले देशों की संवृद्धि दर 4.9 प्रतिशत से घटकर 4.2 और निम्न आय वाले देशों की संवृद्धि दर प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत रह गई थी।

चित्र 2. वैश्विक निर्यात और जीडीपी के बीच अनुपात, 1980-2016

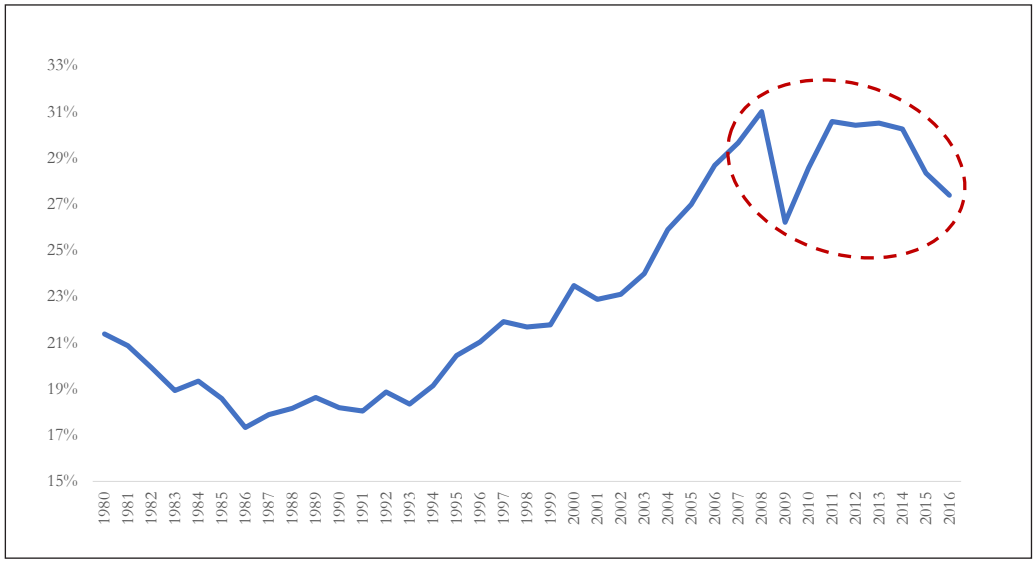

स्रोत: यूएनसीटीएडी, विश्व बैंक

5.17 1998-2007 और 2008-17 के बीच उच्च-मध्यम आय वाले देशों की संवृद्धि-दर में आई 1.2 प्रतिशत बिंद. ुओं की गिरावट को देखें, जबकि इसी अवधि के दौरान निम्न-मध्यम-आय वाले देशों की वृद्धि दर में 0.7 प्रतिशत बिंदुओं की गिरावट देखी गई (चित्र 1 में मध्यम और दाहिने पैनल) इन मंदियों के आधार स्वरूप कुछ बड़े परिवर्तन रहे हैं जिनसे लंबे समय के लिए न केवल संवृद्धि बाधित हो सकती है बल्कि अंततोगत्वा अभिसरण की प्रक्रिया भी मंद हो सकती है। अब हम इन परिवर्तनों की ओर चलते हैं।

चार प्रतिकूल परिस्थितियां (''होर्समैन'')

5.18 इस भविष्यसूचक निराशावाद से अभिभूत नहीं होते हुए भी, लंबित अभिसरण से संवृद्धि में अवरोध के जोखिम को इन चार प्रमुख परिस्थितियों के कारण गंभीरतापूर्वक लेने की आवश्यकता है। ये परिस्थितियां हैं: तीव्र वैश्विकरण का परित्याग, बाधित/रोधित संरचनात्मक परिवर्तन, प्रौद्योगिकी की प्रगति के कारण मानव पूंजी का ह्रास, और जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि पर दबाव।

क. तीव्र वैश्वीकरण का परित्याग

5.19 विकास की दोड़ में देर से शामिल होने वाले विक. ासशील देशों को अब वैश्विक व्यापार का अपने पूर्ववर्तियों की तुलना में काफी भिन्न वातावरण देखने को मिलेगा। अभिसरण में शीघ्र शामिल होने वाले देशों ने तीव्र वैश्वीकरण या अतिवैश्विकता की प्रक्रिया से लाभ उठाया है जोकि वैश्विक व्यापार-जीडीपी के अनुपात में हुई नाटकीय वृद्धियों में स्पष्ट रूप से झलकता है। इसके परिणामस्वरूप, जापान, दक्षिण कोरिया और चीन सभी अपनी अभिसरण अवधियों में 30 वर्षों से 15 प्रतिशत से अधिक औसत निर्यात वृद्धि दर दर्ज करने में सक्षम रहे।

5.20 परंतु इस वैश्वीकरण का परिणाम विकसित देशों में बिल्कुल उलट हुआ जो कि वैश्विक व्यापार-जीडीपी अनुपातों में 2011 से हुई गिरावट में देखा जा सकता है (देखें नीचे चित्र 2)। इसका तात्पर्य है कि शुरूआती अभिसारकों को उपलब्ध व्यापार के अवसर, विशेषकर तीन से चार दशकों के लिए निरंतर वृद्धि की दोहरे अंकों की दरों पर निर्यात करने की योग्यता, संभवत: अब आगे उपलब्ध न रहे।

5.21 तीव्र वैश्वीकरण के परित्याग के संभावित प्रभाव को समझने का एक तरीका है कि व्यापार के गुरुत्व प्रतिमान का सहारा लिया जाए। बुनियादी गुरुत्व सिद्धांत से तात्पर्य है छोटे देशों का बड़े देशों की तुलना में अधिक व्यापार करने की ओर प्रवृत्त होना। दो बराबर आकार के देशों से बने विश्व में ऐसे विश्व की तुलना में अधिक व्यापार देखने में आएगा जिसमें कि अपेक्षाकृत बड़ा देश वैश्विक उत्पादन में 95 प्रतिशत का भागीदार है। कुछ समय से, विश्व में मूलभूत उत्पादन के वितरण में और अधिक समानता आती जा रही है।[3] यह अभिसरण का परिणाम है। अत: यदि यहां अभिसरण है, तो गुरुत्व प्रतिमान से लगता है कि व्यापार में भी वृद्धि होगी।

5.22 उदाहरण के लिए, 1970 और 2000 के बीच विश्व लगभग 7.0-7.5 'तुल्य देशों' से बना हुआ था। अन्य शब्दों में, इस दौरान, गुरुत्व मॉडल के अनुसार वैश्विक व्यापार एक दूसरे के साथ व्यापार करने वाले समान आकार के 7.0-7.5 देशों के व्यापार के समतुल्य लगता था। वर्ष 2000 से, चूंकि और अधिक देश अमीर देशों की बराबरी में आने लगे हैं, वैश्विक उत्पादन और अधिक संवितरित हो गया है। शीर्ष 50 देशों (तेल निर्यातकों को छोड़कर) की सूची को देखते हुए और वैश्विक उत्पाद के वितरण को आकलित करने से यह लग रहा है कि वर्ष 2016 में विश्व में लगभग 9.6 'देश-तुल्य' विद्यमान हैं। अति तीव्र वैश्वीकरण की अवधि के दौरान विश्व व्यापार-जीडीपी अनुपात वैश्विक जीडीपी के लगभग 17 प्रतिशत में लगभग 14 प्रतिशत की वृद्धि के साथ लगभग 31 प्रतिशत पहुंच गया था। इसमें लगभग एक तिहाई वृद्धि आर्थिक अभिसरण की प्रक्रिया के कारण संभव हो सकी थी।

5.23 भविष्य की ओर देखें तो, यह अनुमान लगाना उदाहरण ास्वरूप होगा कि वैश्विक व्यापार के लिए आगे अभिसरण के और क्या निहितार्थ होंगे और क्या ऐसे वैश्वीकरण को बनाए रखने की राजनीतिक कार्यान्वयन क्षमता (कैरिंग कैपेसिटी) न सिर्फ विकसित देशों में बल्कि क्या चीन जैसे देशों में भी होगी।

5.24 अब, भारत जैसे एक या कुछ देशों के लिए यह आवश्यक नहीं कि उन्हें संवृद्धि पर ऐसी बाह्य बाध्यता

---

[3] जैसाकि ([3]एडरसन 2011) दर्शाया गया है, बिना व्यापार-बाधाओं वाले विश्व में, वैश्विक उत्पादन में व्यापार का हिस्सा $1-\sum(bj)^2$ द्वारा दिया गया है, जहां bj वैश्विक उत्पादन में किसी देश का हिस्सा है। इस व्यंजक (एक्सप्रेशन) को उलटने पर विश्व में तुल्य देशों की संख्या ज्ञात होती है जो कि अभिसरण के साथ बढ़ती है। बेयर एवं बर्जस्ट्रैंड (2001) ने व्यापार पर अभिसरण का सांख्यिकी आधार पर महत्वपूर्ण प्रभाव देखा।

चित्र 3. समय से पूर्व विऔद्योगीकरण

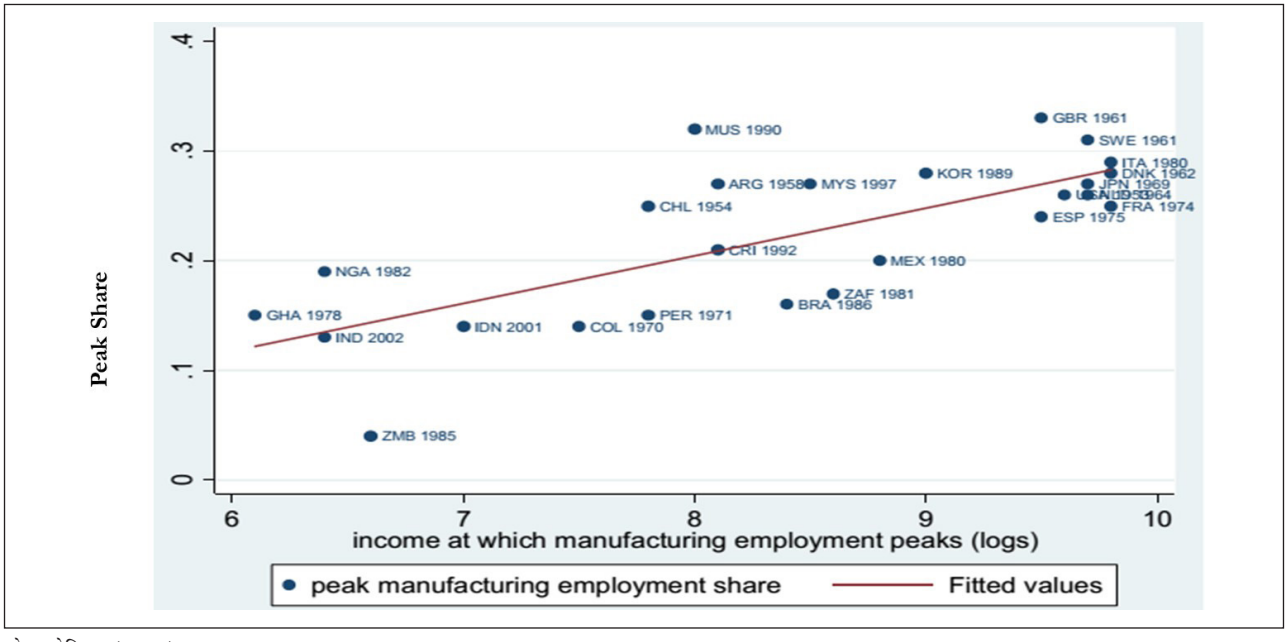

स्रोत: रोड्रिक (2015)

चित्र 4. संरचनात्मक परिवर्तन द्वारा संवृद्धि की कितनी व्याख्या हुई है? भारत की तुलना में चीन में अधिक

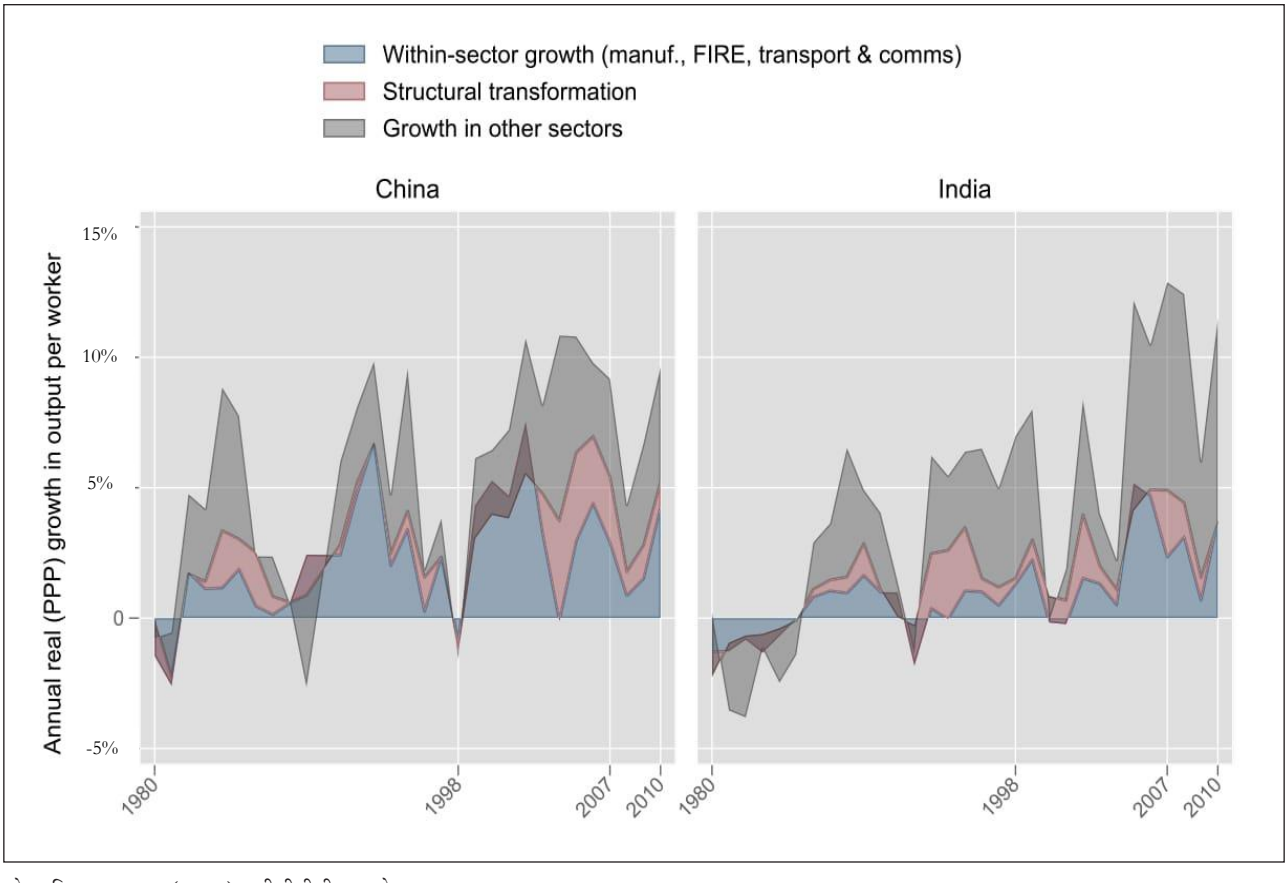

स्रोत: टिमर एट एल (2014); जीजीडीसी डाटाबेस

आगे भी मिले परंतु कुल मिलाकर निम्न और मध्यम आय वाले देशों के लिए ऐसा संभव है।

5.25 ऐसा कच्चा आकलन इस चुनौती का आभास कराता है। यदि अभिसरण की वर्तमान प्रक्रिया जारी रहती है और इसमें कोई अन्य देश-तुल्य शामिल होता है, तो वैश्विक उत्पादन का वितरण और भी अधिक छितराया हुआ होगा, जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक व्यापार जीडीपी अनुपात में 1(एक) प्रतिशत बिंदु की अतिरिक्त वृद्धि होगी। प्रश्न यह है: क्या राजनीति, विशेषकर, विकसित अर्थव्यवस्थाओं और चीन में, व्यापार में इस तरह की संवृद्धि को बनाए रखने में सक्षम रहेगी? स्मरण रहे, विकसित देशों में तो राजनीति व्यापार-जीडीपी के निम्न अनुपातों को प्राप्त करने की दिशा की ओर जा रही है।

ख. बाधित संरचनात्मक परिवर्तन अच्छी संवृद्धि और धारणीय संवृद्धि

5.26 सफल विकास में दो तरह के संरचनात्मक परिवर्तनों की आवश्यकता होती है: (1) संसाधनों को निम्न उत्पाद. कता से उच्च उत्पादकता वाले क्षेत्रों में लगाना (जैसा कि सर आर्थर लुइस द्वारा रेखांकित किया गया है); और (2) संसाधनों के बड़े हिस्से को उन क्षेत्रों के लिए समर्पित करना जिनमें उत्पादकता की तीव्र संवृद्धि की संभाव्यता (क्षमता) हो। तथापि अनेक मामलों में, संसाधन इस तरीके से नहीं लगाए जाते, बल्कि इन्हें अनौपचारिक, निम्न उत्पादकता वाले क्षेत्रों से उन क्षेत्रों में लगाया जाता है जो थोड़े ही कम अनौपचारिक/अधिक उत्पादनशील हैं। हम इन मामलों को ''बाधित संरचनात्मक परिवर्तन'' कह सकते हैं।

5.27 रोड्रिक (2015) ने परिवर्तनों की सफलता सुनिश्चित करने के लिए विनिर्माण क्षेत्र को निर्णायक क्षेत्र माना है। यह क्षेत्र वैश्विक मंच पर नि:शर्त अभिसरण को प्रदर्शित करता है; यदि कोई देश इसे प्राप्त कर पाए तो यह तीव्र संवृद्धि में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है। इसीलिए ''समय से पूर्व विऔद्योगीकरण'', अर्थात लंबित अभिसारकों में क्रियाकलाप के निम्न स्तरों पर ही और विकास प्रक्रिया के आरंभिक चरणों में ही शिखर स्तर पार कर जाने का रुझान, चिंता का कारण बना हुआ है।

5.28 नीचे चित्र 3 में रोड्रिक (2015) ने उस आय स्तर को प्रदर्शित किया है जिस पर विनिर्माण के शीर्ष हिस्से (y-एक्सिस) रोजगार के हिस्सों (x-एक्सिस) के सापेक्ष उत्कर्ष पर हैं। यहां ठोस सकारात्मक संबंध देखने को मिला

चित्र 5. ''अच्छी संवृद्धि'' तथा कुल संवृद्धि के हिस्सों में सहसंबंध: अच्छी संवृद्धि का हिस्से गिर रहा है तथा सहसंबंध कमजोर हो रहा है।

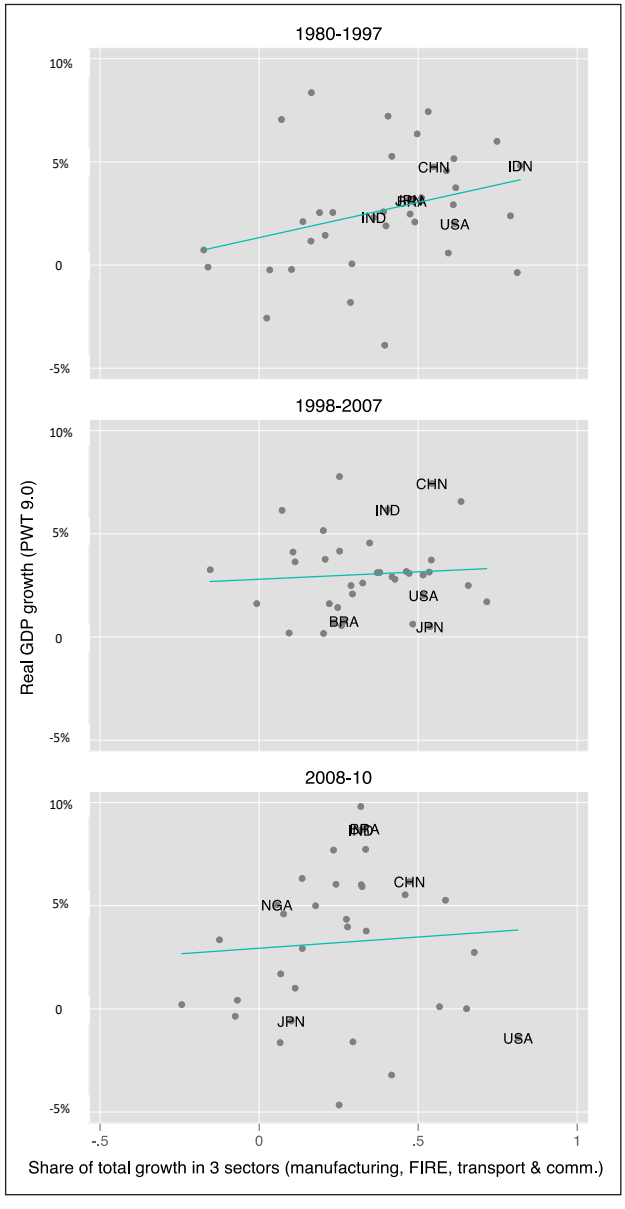

स्रोत : पेन वर्ल्ड टेबल

---

4 जीजीडीसी डाटा 10 क्षेत्रों की पहचान करते हैं। इस विश्लेषण के उद्देश्य से हम, संरचनात्मक रूपांतरण को उन दस में से तीन के साथ सहयोजित करते हैं: (i) विनिर्माण; (ii) परिवहन, भंडारण तथा संप्रेषण; और (iii) वित्त, बीमा, रियल इस्टेट एवं व्यापार सेवाएं।

5 इन आंकड़ों में दर्शायी गई तीन समयावधियों के लिए क्रमश: 38, 37 और 34 देश शामिल हैं। गिरावट रेखाओं में दर्शाए गए 'अच्छी संवृद्धि के हिस्से' संबंधी गणक प्रथम अवधि में लगभग 0.4 पर है तथा बाद की अवधियों में तेजी से गिरकर 0.1 पर पहुंच गये हैं। (और सांख्यिकीय रूप में शून्य से अपरिजेय)

है जो इस बात का द्योतक है कि अमीर देशों ने विकास प्रक्रिया में प्रारंभिक चरणों में शीर्ष विनिर्माण के उच्चतर स्तरों को प्राप्त किया। केन, हसन और मित्रा (2010) और अमिरापु और सुब्रमण्यन (2014) ने इस प्रक्रिया को भारत के भीतर राज्यों के संदर्भ में प्रमाणित किया है।

5.29 क्या विकास की दौड़ में विलंब से शामिल होने वाले देश इस दौड़ में पिछड़ जाते हैं? इसका मूल्यांकन करने के लिए, हमने विनिर्माण के संबंध में रोड्रिक के संरचनात्मक परिवर्तन को विनिर्माण से अधिक व्यापक बनाया है। विशेष रूप से, अमिरापु और सुब्रमण्यन द्वारा भारत के विस्तृत अध्ययन के आधार पर हम उत्पादकता के उच्च स्तरों तथा शर्त रहित अभिसरण की संभाव्यता वाले गतिशील क्षेत्रों का अभिनिर्धारण करते हैं। ऐसी सूची में विनिर्माण, वित्त, दूरसंचार तथा व्यावसायिक सेवाएं शामिल हैं। तत्पश्चात् हम रोड्रिक का 'शिफ्ट-शेयर' विश्लेषण करने के लिए ग्रानिंगन डाटाबेस (टिमर, डि व्रीज एंड डि व्रीज 2014) का प्रयोग करते हैं तथा सम्पूर्ण उत्पादकता संवृद्धि को ''अच्छी'' (अर्थात वांछनीय संरचनात्मक परिवर्तन शामिल है) तथा ''कम अच्छी'' (उदाहरणतः हॉटलों, रेस्टोरेंटों, परिवहन आदि) संवृद्धि में बांटते हैं।''[4]

5.30 इस प्रकार, अच्छी संवृद्धि में श्रम अंश (लेबर-शेयर) के इन अच्छे क्षेत्रों में परिवर्तन तथा उनकी उत्पादकता वृद्धि के कारण हुई वृद्धि शामिल होती है। इस विश्लेषण के विवरण के लिए अनुबंध देखें।

5.31 व्यापक-शैलीगत तथ्यों को प्रस्तुत करने के पूर्व इस आलोच्य विषय पर चर्चा को प्रोत्साहित करने के लिए हम वर्ष 1980 से चीन तथा भारत में अच्छी तथा कम अच्छी संवृद्धि की तुलना करते हैं।

5.32 चित्र 4 में नीले तथा लाल क्षेत्रों के योग से अच्छी संवृद्धि बनी है तथा ग्रे क्षेत्र से कम अच्छी संवृद्धि बनी है। चीन के लिए संपूर्ण अवधि हेतु अच्छी संवृद्धि का औसत अंश 53 प्रतिशत है जबकि भारत के लिए 37 प्रतिशत है, वैश्विक वित्तीय संकट से यह लगभग 32 प्रतिशत रह गया है।

5.33 इसके बाद हम जांचते हैं कि क्या संपूर्ण संवृद्धि तथा ''अच्छी संवृद्धि'' के बीच आरंभिक तथा बाद के अभिसारक के मध्य सहसंबंधों में कोई भिन्नता है? निम्नलिखित चित्र 5 इन सहसंबंधों की रूपरेखा दर्शाता है।

5.34 दो विशेषताएं विचारणीय हैं। बहुत समय से अच्छी

चित्र 6. देश की आय समूह और समय अवधि के अनुसार माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सीखने का स्तर: मध्यम आय वाले देश आज पूर्व की अवधि से और अधिक पीछे हैं।

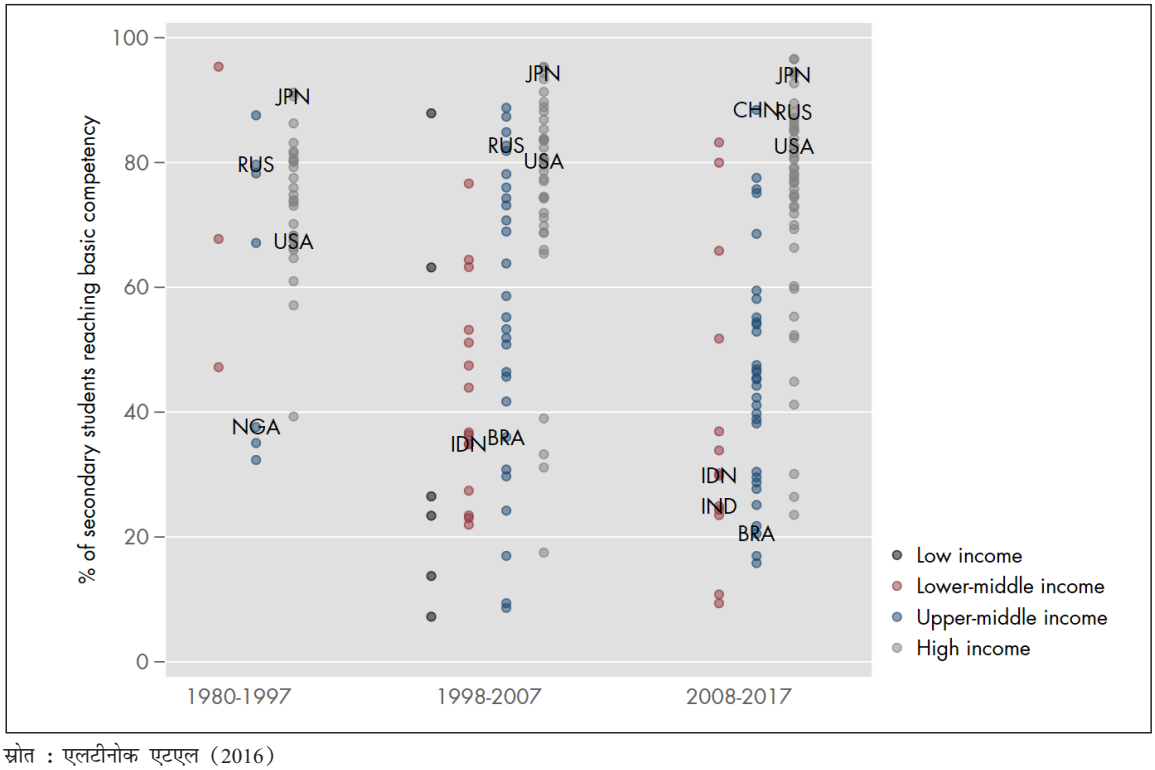

स्रोत : एलटीनोक एटएल (2016)

संवृद्धि के अंश में सामान्यत: बायीं ओर को चलन रहा है। यह एक अर्थ में अपरिपक्व वि-औद्योगीकरण के लक्षण को और अधिक सामान्य रूप में दर्शाता है। द्वितीयत:, अपसृति की आंरभिक अवधि में संवृद्धि तथा अच्छी संवृद्धि के मध्य एक सकारात्मक सहसंबंध था; समय के साथ यह सहयोजन कमजोर हुआ है। हालांकि यह बात ध्यान में रखी जाए कि क्षेत्रीय रोजगार के ये आंकड़े केवल कुछ दर्जनभर देशों के लिए ही उपलब्ध हैं, तथा अधिकांश विकासशील देश इस प्रतिदर्श से बाहर ही हैं।[5]

5.35 अत: इस कुंठित संरचनात्मक परिवर्तन की कल्पना में कुछ तो है। दिलचस्पी की बात है कि चीन की अच्छी संवृद्धि दोनों अवधियों में बनी रहती है; तथा भारत की अच्छी संवृद्धि का हिस्सा दूसरी अवधि में कम हो जाता है। वास्तव में, दोनों ही संबंध विशेष रूप से सकारात्मक हैं, जो इस संभावना को बढ़ाते हैं कि जहां वह अच्छी संवृद्धि वाला सामान्य पैटर्न धारणीय संवृद्धि के लिए आवश्यक है, वहीं चीन और भारत इस पैटर्न की उपेक्षा कर सकते हैं। तथापि, यह अधिक विवेक सम्मत होगा कि स्थायी अपवादिता पर विश्वास नहीं किया जाए।

ग. मानव पूंजी का ह्रास

5.36 किसी न किसी तरह से विनिर्माण पर आधारित आरंभिक अभिसरण तथा स्वचालनीकरण और वैश्वीकरण में ह्रास की विषम परिस्थितियों के विरुद्ध परवर्ती अभिसरण के मध्य एक प्रमुख भिन्नता रही है और यह मानव-पूंजी से संबंधित है। आरंभिक अभिसरण में मानव-पूंजी निधि (शिक्षित लेकिन तुलनात्मक रूप से अकुशल कामगार) का संरचनात्मक रूपांतरण से जुड़े हुए क्षेत्र के साथ सरेखण था, नामत: विनिर्माण, जिसने शेष अर्थव्यवस्था को अंत: विस्तार तथा गतिशीलता के फैलाव की अनुमति दी थी। श्रम में परिवर्तन, (शिफ्ट इन लेबर) तथाकथित खेती से फैक्ट्री में लेविसीय परिवर्तन, इसी संयोग, तुलनात्मक लाभ पर आधारित संवृद्धि और संरचनात्मक परिवर्तन, के कारण संभव हुआ था।

बॉक्स 1: ग्रामीण प्राथमिक शिक्षा में सीखने की कमी की गणना (एलपीसी) और सीखने की कमी के अन्तर

भारत में प्राथमिक स्कूलों में नामांकन के बहुत अधिक प्रयास किए गए हैं, जो अब मौलिक स्तर पर लड़कों और लड़कियों के लिए सर्व व्यापी होने के नजदीक हैं। फिर भी, देशों के साक्ष्य और भारत के साक्ष्य दर्शाते हैं कि शैक्षणिक परिणाम पढ़ाई के वर्षों से असमानुपाती हैं: शिक्षा स्तर स्कूल उपस्थिति से पिछड़ रहा है (परिचैट, 2013, दास और जाजोनक, 2010, सिंह,2014)

यहां पर हम गरीबी मापने के साहित्य से प्राप्त परिणामों के समान्तर शिक्षा में कमी के अनुमानों को प्रस्तुत कर रहे हैं। विशेषकर, हम सीखने की कमी की कुल गणना (एलपीसी) के साथ-साथ सीखने की कमी के अन्तर (एलपीजी) का अनुमान लगाते हैं। एलपीसी सामान्यत: उन बच्चों की संख्या की गणना करता है, जो सीखने के आधारभूत बैंचमार्क को पूरा नहीं करते, जबकि एलपीजी में यह भी शामिल किया जाता है कि प्रत्येक विद्यार्थी बैंचमार्क से कितना दूर है। अन्य शब्दों में, एलपीसी आधारभूत सीखने के बैंचमार्क और उन विद्यार्थियों के औसत अंक, जिन्होंने बैंचमार्क को पूरा नहीं किया, के बीच के अन्तर को मापता है।

ऐसे अनुमान शिक्षा की वार्षिक सर्वेक्षण रिपोर्ट (एएसईआर) द्वारा संभव बनाए जाते हैं, जो भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के 5 से 16 वर्ष की आयु समूह के बच्चों के नमूना परीक्षण से आंका जा रहा है। दूसरी ओर एलपीजी विद्यार्थियों के पढ़ने और गणित के ज्ञान के स्तरों से जांचा जाता है, जो लम्बे समय से स्थिर रहा है। इस प्रकार, ये परीक्षण शिक्षाप्राप्ति के बिल्कुल न्यूनतम और आधारभूत पैमाने हैं-जो गरीबी या निर्वाह रेखा के समान है। विशेषकर, हम यह मान कर चल रहे हैं कि साधारण कहानी की तरह पढ़ना (स्थानीय भाषा में) और घटा करने में सक्षम होना-आमतौर पर तीसरी श्रेणी को पास करने का न्यूनतम पैमाना होता है। वर्तमान विश्लेषण के लिए, हम श्रेणी 3 और 8 के बीच के बच्चों पर ध्यान देते हैं।

चित्र 1 और 2 व्याख्या करते हैं कि भारत इन दो मापकों में कितना सफल है। निष्कर्ष बहुत चौंकाने वाले हैं। गणित और पढ़ने के संदर्भ में भारत का स्पष्ट एलपीसी 40 से 50 प्रतिशत के बीच है: ग्रामीण भारत के लगभग 40-50% बच्चे स्तर 3 से 8 के बच्चे आधारभूत सीखने के स्तर को भी पूरा नहीं करते (चित्र 1) निराशाजनक रूप से, यह कमी वृद्धिमान है, विशेषकर गणित में। कुछ संतोष है कि 2014 से कुछ सुधार आए हैं; और यह भी संतोष है कि लड़के और लड़कियों के एलपीसी में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

हम सीखने की कमी की गणना (एलपीसी) को किसी भी समय में उन बच्चों के अनुपात में मापते हैं जो इस न्यूनतम स्तर को पूरा नहीं करते।

चित्र 1: **सीखने की कमी की गणना (एलपीसी) 2007-2016**

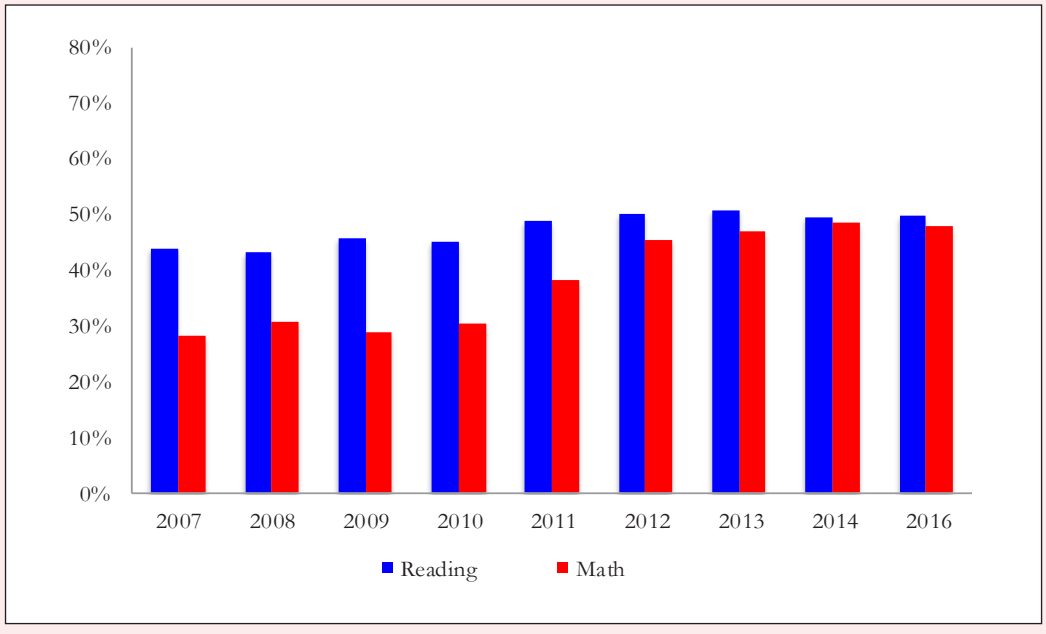

चित्र 2: में सीखने की कमी के अंतराल (एलपीसी) के अनुमान दर्शाए गए हैं। काल पैटर्न एलपीसी के पैटर्न के समान है। एलपीसी का सबसे हालिया स्तर पठन के लिए लगभग 25% है और गणित के लिए कुछ कम है। इस संख्या को समझने का एक तरीका यह है कि कक्षा 3 से 8 में प्रत्येक विद्यार्थी औसतन 2.2 अंक प्राप्त करता है जबकि दूसरी कक्षा में सीखने की अपेक्षाएं पूरी करने के लिए 3 अंक हासिल करना जरूरी है।

चित्र 3: सीमा से वास्तविक दूरी

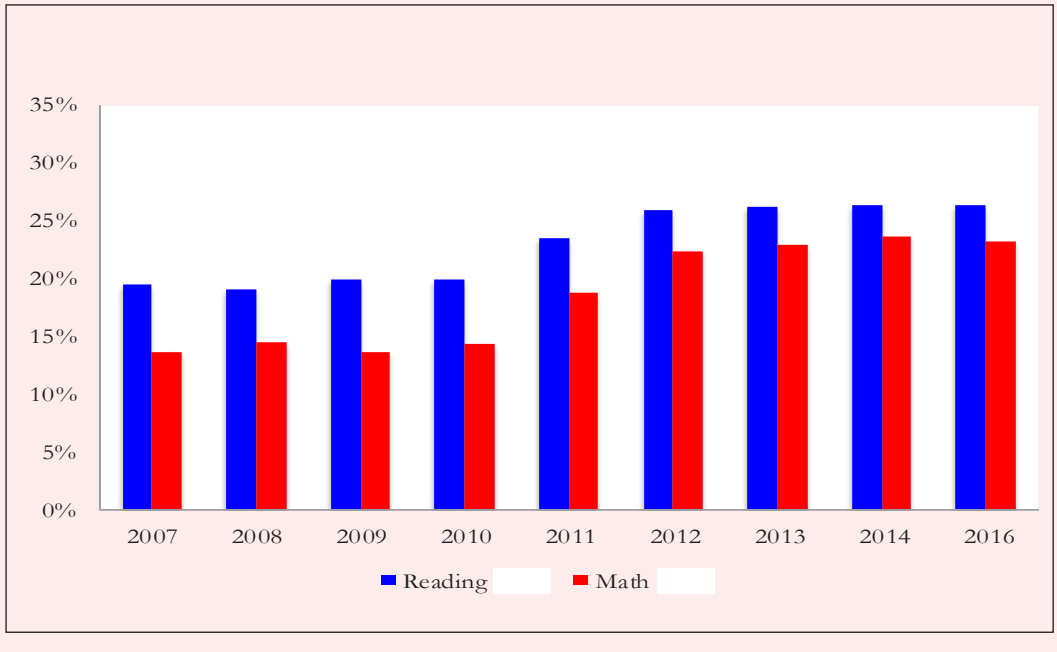

चित्र 3: सीमा से वास्तविक दूरी

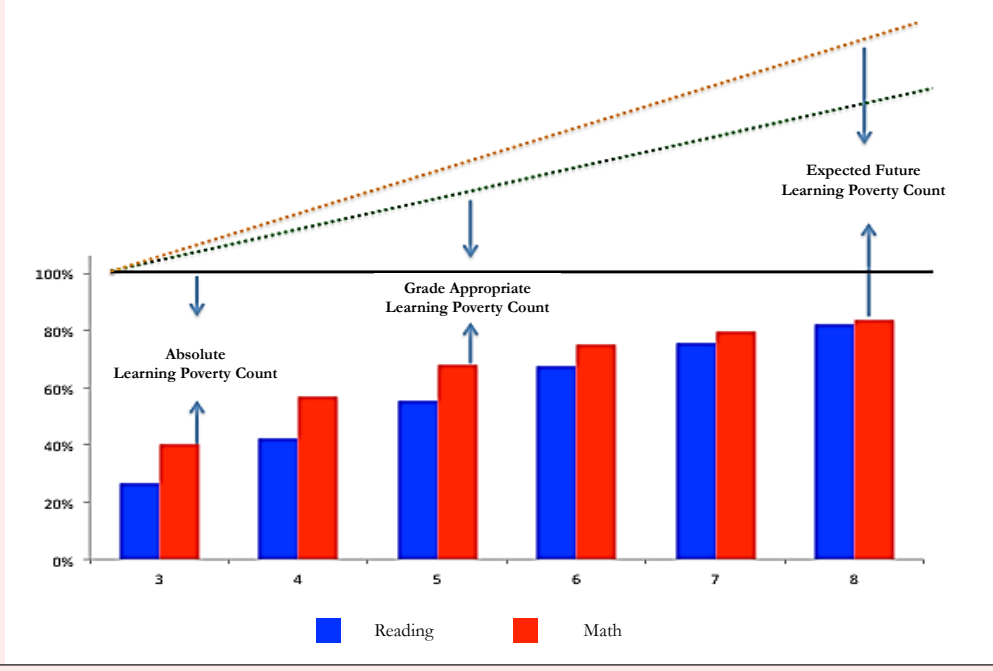

जब विद्यार्थी कक्षाओं में आगे बढ़ते हैं तब उनका प्रदर्शन कैसा होता है? चित्र 3 में प्रत्येक कक्षा में ऐसे विद्यार्थियों का अनुपात दर्शाया गया है जो कक्षा 2 के सीखने के बैंच मार्क को पूरा करते हैं (क्षैतिज काली रेखा से ऊर्ध्व दूरी। इसमें आश्चर्य नहीं की उच्चतर कक्षाओं में विद्यार्थियों का बड़ा हिस्सा इस आधारभूत बेंचमार्क पर खरा उतरता है। लेकिन जैसे-जैसे विद्यार्थी ऊंची कक्ष. ाओं में जाते हैं, सीखने के बैंचमार्क में वृद्धि होनी चाहिए। हालांकि एसर (एएसईआर) आंकड़े हमें सीधे इसकी गणना करने की अनुमति नहीं देते, कटी हुई हरी रेखा कक्षा विशिष्ट बैंचमार्क को आनुमानिक रूप से व्यक्त करती है। कक्षा विशिष्ट, उसी उपयुक्त कमी रेखा, का प्रयोग करते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्रामीण भारत में स्कूली बच्चों के सीखने के स्तर जितने होने चाहिए, उससे कहीं कम हैं।

यह काफी गंभीर तथ्य है कि सीखने में कमी लगभग 40% है, ये वही स्तर हैं जहां भारत के उपभोग संबंधी कमी के आंकड़े 1970 के दशक में थे। लेकिन यदि आगे चलकर प्रौद्योगिकी और अधिक मानव पूंजी प्रधान होने जा रही है जैसाकि मौजूदा रुझान इंगित कर रहे (बिंदु वाली पीली रेखा) हैं तो भावी श्रम बल के सामने उपलब्ध अवसर और उनसे लाभ उठाने की क्षमता के बीच मौजूद खाई और अधिक बड़ी हो जाएगी। भारत की मानव पूंजी संबंधी चुनौती का यह असली रूप है।

हम सीखने की कमी की गणना (एलपीसी) को किसी भी समय में उन बच्चों के अनुपात में मापते हैं जो इस न्यूनतम स्तर को पूरा नहीं करते।
$LPC = \sum_g N^*_g / \sum_g N_g$

N^*_g कक्षा g (जहां g का मान 3 से 8 तक होता है) बच्चों की संख्या के द्योतक है, जो परीक्षण से पूरा करते हैं। Ng कक्षा g के कुल बच्चे हैं।

तुलनात्मक रूप से, सीखने की कमी का अन्तर है:

$LPG = 1/N[\sum_i((PL - S_i)/PL]$

Si एक बच्चे i का स्कोर है और PL न्यूनतम सीखने का मानक है, और Ip संकेतक फलन है, जो आई का मान लेता है यदि एक विद्यार्थी सीखने के स्तर को पूरा नहीं करता, और अन्यथा-शून्य

चित्र 7: विभिन्न देशों में जीडीपी के विपरीत कृषि उत्पादकता के स्तर अधिकाधिक भिन्न हो रहे हैं; एक जैसे नहीं।

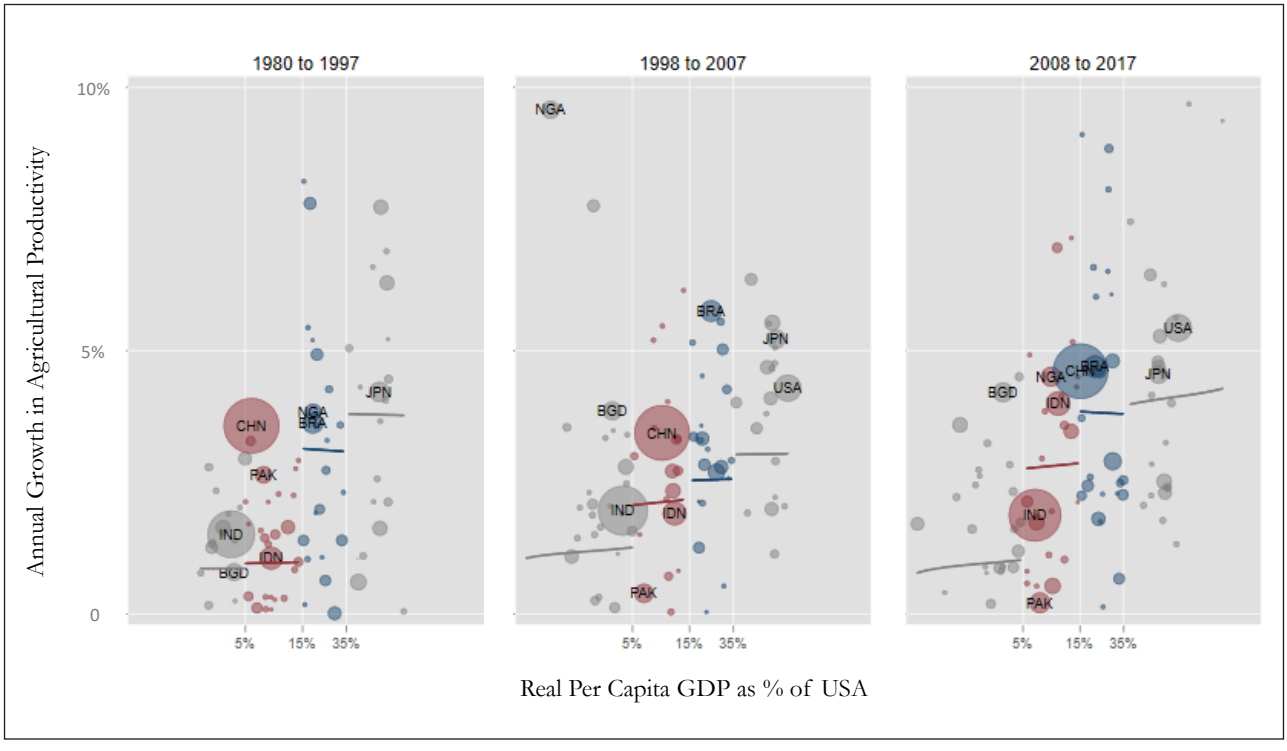

स्रोत : विश्व बैंक, पेन वर्ल्ड टेबल्स.

टिप्पणी: रेखाएं स्थानिक बहुपद प्रतीपगमन दर्शाती हैं। बुलबुले आरंभिक आबादी के आनुपातिक है, लेकिन प्रतीपगमन और औसत भारांश से रहित हैं।

5.37 परवर्ती अभिसारकों (विकास की दौड़ में बाद में शामिल होने देशों) को दोहरी चुनौती का सामना करना है। वे न केवल कुछ संरचनात्मक बदलावों के लिए आवश्यक आधारभूत शिक्षा उपलब्ध कराने में असफल रहे हैं, वरन् वह असफलता लगातार मंहगी साबित होगी क्योंकि नए संरचनात्मक परिवर्तन के लिए मानवीय पूंजी की सीमांत रेखाएं और अधिक आगे विवर्तित हो गई हैं। प्रौद्योगिकी निरंतर रूप से अधिक कुशल मानव पूंजी का पक्ष लेगी, जहां अपेक्षित कुशलता में स्वीकार्यता तथा निरंतर सीखने की क्षमता समाहित होगी। यह तर्क रखा जा सकता है कि संवृद्धि स्वयं तुलनात्मक लाभ पर कम निर्भर होगी और मानव पूंजी से प्राप्ति में किसी परम लाभ पर ज्यादा निर्भर होगी।

5.38 निम्नलिखित रेखाचित्र 6 इन्हीं कुछ पर्यवेक्षणों को दर्शाता है। यह; एल्टिनॉक आदि (2016), जो विभिन्न क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय अधिगम कार्यों से आंकड़े एकत्र करते हैं, से लिए गए विकसित तथा विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के एक समूह के शिक्षा अधिगम परिणामों के उपलब्ध आंकड़ों की रूपरेखा तैयार करता है। 1980 तथा 1990 के दशकों के दौरान, मध्यम आय वाले देशों की शैक्षणिक उन्नति विकसित अर्थव्यवस्थाओं से कम थी। लेकिन वह अंतर, उनके लिए उस अंतर से कम था जो अभी हाल ही की अवधि में निम्न मध्यम आय देशों के लिए था। यदि यह अंतर बना रहता है अथवा और बढ़ता है तो परवर्ती अभिसारकों द्वारा उपयोग किया गया वह परिवर्तन, भारत सहित परवर्ती अभिसारकों के लिए और अधिक कठिन साबित हो सकता है।

5.39 प्रतिदर्श-चयन इस परिणाम के एक अंश को स्पष्ट करता है। आज गरीब तथा निम्न-मध्यम आय वाले देश और अधिक रूप से अंतर्राष्ट्रीय शैक्षिक अधिगम मूल्यांकनों में भाग लेने लगे हैं-और 1960 की अपेक्षा 1997 में अधिक जनसंख्या विद्यालय जाने लगी है। संभवत: अधिगम-इकाईयों को आरंभिक रूप में अंगीकार करने वाले पहले से ही संवृद्धि के पथ पर हैं। किंतु मूलभूत परिदृश्य एक दम भिन्न हैं। मध्यम आय वाले देश जो आज सीखने के मूल्यांकन में भाग ले रहे हैं, वे 21वीं शताब्दी के पूर्वार्ध के अमीर

चित्र 8: भारतीय कृज़ि उत्पादकता वृद्धि

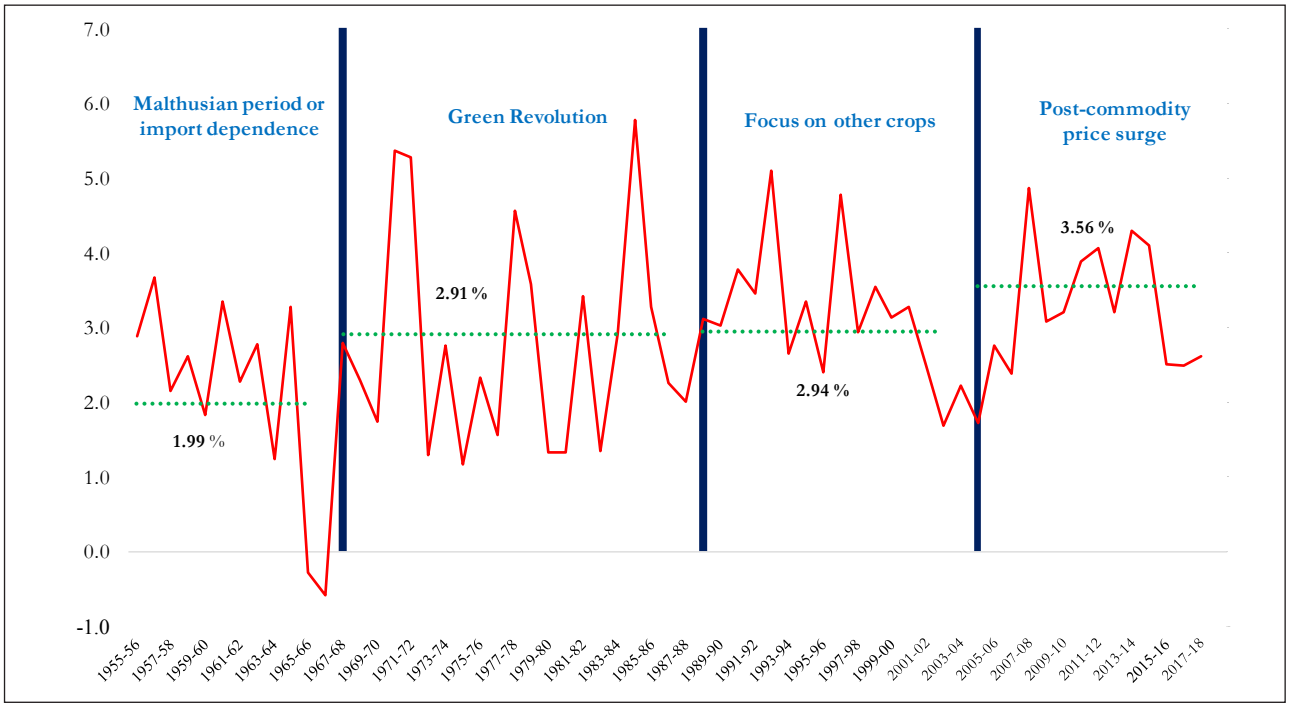

स्रोत: सर्वेक्षण गणनाएं; संख्याएं, प्रतिशतता में संगत अवधि के लिए औसत वृद्धि को प्रतिनिधित्व करती हैं।

देशों के स्तर से भी पीछे हैं; यही नहीं, ये तो उन देशों के 20वीं सदी के स्तर से भी पीछे हैं।

5.40 मानव पूंजी चुनौतियों के संदर्भ में एक अन्य भारत-. विशिष्ट परिप्रेक्ष्य भी है, जो नीचे बॉक्स में चिन्हांकित किया गया है।

घ. जलवायु परिवर्तन के कारण निर्मित कृज़ि दबाव:

5.41 आर्थिक संवृद्धि की दौड़ में शामिल होने में अड़चन डालने वाला अंतिम कारक कृषि से संबंधित हैं। यह बात अक्सर भुला दी जाती है कि लुईसियन ढांचागत परिवर्तन के लिए, आधुनिक क्षेत्र में बढती कृषि उत्पादकता की स्थितियों में संसाधन लगाने जरूरी होते हैं। इसका कुछ कारण बढती आबादी को पर्याप्त भोजन देने की जरूरत भी है। यह तभी संभव होगा, यदि कृषि श्रम बल की उत्पादकता में काफी तेजी से वृद्धि होती हो पाए।

5.42 लेकिन क्या ऐसी संवृद्धि अभिसरण की प्रक्रिया को रेखांकित करती है? चित्र 7 में दर्शाया गया है कि असल में कृषि उत्पादकता के संबंध में बड़े स्तर पर अपसृति रही है। अपेक्षाकृत समृद्ध देशों की संवृद्धि दर लगातार विकासशील देशों के मुकाबले अधिक रही है। (प्रत्येक समय अवधि में, देशगत समूहों की औसत संवृद्धि को दर्शाती रेखाएं, निर्धनतम से समृद्धतम संवृद्धि तक जाते हुए मात्रा में बढ़ती हैं।)।

5.43 जीएफसी के पश्चात् सर्वाधिक गरीबों की संवृद्धि दरों में कमी आई है। उदाहरणार्थ भारत की कृषि उत्पादकता वृद्धि स्थिर हो गई है, गत 30 वर्षों में औसतन 3 प्रतिशत पर (चित्र 8 को देखें)। इस समीक्षा में आगे एक अध्याय में यह दर्शाया गया है कि भारत की कृषि तापमान वृद्धि के प्रति संवेदनशील है और अभी भी वर्षा पर निर्भर करती है। यह विश्लेषण वहीं यह दर्शाता है कि यदि जलवायु परिवर्तन से तापमान तथा वर्षा की भिन्नता में वृद्धि होती है तो गैर-. सिंचित क्षेत्रों में कृषकों की आय में 20 से 25 प्रतिशत की कमी आ सकती है। देर से विकास की दौड़ में शामिल होने वाले देशों के लिए कृषि उत्पादकता केवल लोगों के भरण-पोषण के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि कृषि से आधुनिक क्षेत्रों में जाने वालों के लिए मानव पूंजी संचयन के लिए भी आवश्यक है। कृषि अभी भी विकास की दौड में बाद में शामिल होने वाले देशों के लिए ढांचागत अंतरण में एक समस्या का रूप धारण कर सकती है।

भारत के लिए सबक:

5.44 लगभग 1980 से भारत लगातार औसतन 4.5 प्रतिशत की दर से प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि प्राप्त कर रहा है, यह दर पहले प्राप्त दर से काफी बेहतर है। इसमें भारत शीर्ष चतुर्थक के देशों में शामिल है तथा प्रजातांत्रिक देशों में लगातार शीर्ष पर है। लेकिन यह तीव्र वृद्धि कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों से उच्च उत्पादकता तथा गतिशील क्षेत्रों में श्रमिक संसाधनों के सीमित अंतरण से हुई है, जबकि कृषि वृद्धि अपेक्षाकृत कम रही। भारत तथा विकास की दौड़ में देर से शामिल होने वाले अन्य देशों के लिए जोखिम यह है कि संसाधन (विशेषकर श्रमिक) कम उत्पादकता, अनौपचारिक क्षेत्रों से अपेक्षाकृत कम आ. ैपचारिक एवं आंशिक रूप से अधिक उत्पादक अन्य क्षेत्रों की ओर अभिमुख होंगे। यही 'विकास की दौड़ में देर से शामिल होने वाले देशों' के समक्ष बाधा है और भारत को इससे बचना चाहिए।

5.45 मानव पूंजी में तीव्र सुधार-स्वस्थ व्यक्ति, (महिलाओं सहित) बुनियादी शिक्षा, जिसमें सीखा एवं समझा जा सके, भारत के सतत् एवं गतिशील विकास की कुंजी होगा। जलवायु परिवर्तन एवं जल की कमी के बावजूद तेजी से बढ़ती कृषि उत्पादकता अच्छी संवृद्धि की प्राप्ति के लिए दूसरी महत्वपूर्ण कुंजी है। और वस्तुत: उन्नत देशों में वैश्वीकरण की तीखी प्रतिक्रिया, जिस पर भारत का नाम मात्र का नियंत्रण है, में कमी आनी चाहिए ताकि तीव्र संवृद्धि के लिए उपयुक्त बाह्य वातावरण बना रह सके। अभी तक विलंबित अभिसृति की कोई बाधा नहीं है, किन्तु इससे बचना आवश्यक है।

सन्दर्भ

Aiyar, S., Duval, R., Puy, D., Wu, Y., & Zhang, L. (2013, 03). Growth Slowdowns and the Middle-Income Trap. *IMF Working Papers*.

Altinok, N., & Aydemir , A. (2016, 06). Does one size fit all? The impact of cognitive skills on economic growth. *Bureau d'Economie Théorique et Appliquée*.

Amirapu, A., & Subramanian, A. (2014). Manufacturing or Services? An Indian Illustration of a Development Dilemma. *Center for Global Development Working Paper Series*.

Anderson, J. E. (2011, 09). The Gravity Model . *Annual Review of Economics*.

Baier, S. L., & Bergstrand, J. L. (2001). The growth of world trade: tariffs, transport costs, and income similarity. *Journal of International Economics, 53*, 1-27.

Cain, J., Hasan, R., & Mitra, D. (2010). Trade Liberalization and Poverty Reduction: New Evidence from Indian States. *Columbia University Academic Commons*.

Gates, B., & Gates, M. (2014, January). *Annual Letter 2014*. Retrieved from Bill & Melinda Gates Foundation: https://www.gatesfoundation.org/Who-We-Are/Resources-and-Media/Annual-Letters-List/Annual-Letter-2014

McMillan, Margaret, et al. (2015). "Supporting Economic Transformation." *Overseas Development Institute*. Processed.

Pinker, S., & Goldstein, J. S. (2016, 04 15). *The decline of war and violence*. Retrieved from The Boston Globe: http://www.bostonglobe.com/opinion/2016/04/15/the-decline-war-and-violence/lxhtEplvppt0Bz9kPphzkL/story.html?event=event25

Pritchett, Lant. (1997) "Divergence, Big Time." *The Journal of Economic Perspectives, vol. 11, no. 3, pp. 3–17*.

Pritchett, L., & Summers, L. H. (2014, 10). Asiaphoria Meets Regression to the Mean. *NBER Working Paper*.

Rodrik, D. (2015). Premature Deindustrialization. *NBER Working Paper Series*(20935).

Roy, S., Kessler, M., & Subramanian, A. (2016, 10 29). Glimpsing the End of Economic History? Unconditional Convergence and the Missing Middle Income Trap. *Center for Global Development Working Papers*. Retrieved from https://www.cgdev.org/sites/default/files/glimpsing-end-economic-history-unconditional-convergence.pdf

Subramanian, Arvind. "Eclipse: Living in the Shadow of China's Economic Dominance." *Peterson Institute for International Economics, Washington D.C.*

Timmer, M. P., de Vries, G., & de Vries, K. (2014, 07). Patterns of Structural Change in Developing Countries. *Routledge Handbook of Industry and Development*, 65-83.